

Chapter बाईस

कृष्ण द्वारा अविवाहिता गोपियों का चीरहरण

इस अध्याय में बतलाया गया है कि किस तरह ग्वालों की कुमारी पुत्रियों ने श्रीकृष्ण को पति रूप में पाने के लिए कात्यायनी की पूजा की और किस तरह कृष्ण ने इन कुमारियों का वस्त्रहरण किया तथा उन्हें वर दिए।

मार्गशीर्ष मास-भर ग्वालों की कुमारी पुत्रियाँ एक-दूसरे का हाथ पकड़कर कृष्ण का गुणगान करती हुई प्रतिदिन प्रातः यमुना-स्नान करने जाती थीं। कृष्ण को पति रूप में प्राप्त करने के लिए वे अगुरु, पुष्प तथा अन्य वस्तुओं से देवी कात्यायनी की पूजा किया करती थीं।

एक दिन ये गोपियाँ सदैव की भाँति तट पर अपने वस्त्र रखकर कृष्ण के कार्यकलाप का गुणगान करती हुई जल-क्रीड़ा करने लगीं। सहसा कृष्ण वहाँ आये और सारे वस्त्र उठाकर पास के कदम्ब वृक्ष पर चढ़ गये। गोपियों को तंग करने की इच्छा से कृष्ण ने कहा, “मुझे पता है कि तुम लोग अपनी तपस्या से कितनी थक चुकी हो अतः निकलकर तट पर आओ और अपने अपने वस्त्र लो।”

तब गोपियों ने ऐसी मुद्रा बनाई मानो क्रुद्ध हों और कहा कि “यमुना का ठंडा जल हमें कष्ट दे रहा है। यदि तुम हमारे वस्त्र हमें नहीं लौटाते तो हम इस घटना की सूचना महाराज कंस को देंगी। किन्तु यदि हमारे वस्त्र लौटा देते हो तो हम तुम्हारी दासी की तरह तुम्हारे आदेश का पालन करेंगी।”

श्रीकृष्ण ने उत्तर दिया कि “मुझे राजा कंस का तनिक भी डर नहीं है। यदि तुम लोग वास्तव में मेरी आज्ञा मानना चाहती हो और मेरी दासी बनना चाहती हो तो एक-एक करके तट पर आओ और अपने अपने वस्त्र ले लो।” शीत से कँपकँपाती कन्याएँ अपने गुप्तांगों को दोनों हाथों से ढके हुए जल के बाहर आईं। कृष्ण का उनसे अत्यधिक स्नेह था इसलिए वे फिर बोले, “तुम लोगों ने व्रत रखते हुए नग्न होकर जल में स्नान करके देवताओं के प्रति अपराध किया है, अतः इसके निराकरण के लिए तुम दोनों हाथ जोड़कर मुझे नमस्कार करो। तभी तुम्हें तपस्या का पूरा फल प्राप्त होगा।”

गोपियाँ श्रीकृष्ण के आदेश को मान गईं और सम्मान में हाथ जोड़कर उनको नमस्कार किया। प्रसन्न होकर उन्होंने उनके वस्त्र लौटा दिये। किन्तु वे कन्याएँ उन पर इतनी अनुरक्त हो चुकी थीं कि वे वहाँ से हट नहीं पा रही थीं। उनके मन की बात समझकर कृष्ण ने कहा कि मैं जानता हूँ कि तुम लोगों ने मुझे पति रूप में पाने के लिए कात्यायनी की पूजा की है। चूँकि गोपियाँ अपना मन उन्हें अर्पित कर चुकी थीं अतएव उनकी इच्छाएँ अब दुबारा भौतिक भोग से रंजित नहीं हो सकतीं जिस तरह भुने जौ से अंकुर नहीं फूट सकते। कृष्ण ने कहा कि अगली शरद ऋतु में तुम्हारी इच्छाएँ पूरी हो सकेंगी।

तत्पश्चात् गोपियाँ पूरी तरह संतुष्ट होकर ब्रज लौट गईं और कृष्ण तथा उनके ग्वालमित्र गौवें चराने

दूर चले गये।

कुछ समय बाद जब ग्वालबाल गर्मी की तपन से त्रस्त हो गये तो उन्होंने एक वृक्ष के नीचे शरण ली जो छाते के समान खड़ा था। तब श्रीकृष्ण ने कहा कि वृक्ष का जीवन सर्वोत्तम है क्योंकि वृक्ष पीड़ा सहते हुए भी धूप, वर्षा, बर्फ इत्यादि से दूसरों की रक्षा करता है। वह अपनी पत्तियों, फूलों, फलों, छाया, जड़ों, छाल, काठ, सुगन्धि, रस, राख, लुगदी, अंकुरों इत्यादि से हर एक की इच्छापूर्ति करता है। ऐसा जीवन आदर्श होता है। कृष्ण ने कहा कि वास्तव में जीवन की पूर्णता इसी में है कि अपने प्राण, सम्पत्ति, बुद्धि तथा वाणी से सबों के कल्याण हेतु कर्म किया जाय।

जब कृष्ण इस तरह वृक्ष की महिमा का वर्णन कर चुके तो उनकी पूरी टोली यमुना के तट पर गई जहाँ ग्वालबालों ने स्वयं मधुर जल पिया और अपनी गौवों को भी पिलाया।

श्रीशुक उवाच

हेमन्ते प्रथमे मासि नन्दब्रजकमारिकाः ।

चेरुर्हविष्यं भुञ्जानाः कात्यायन्यर्चनव्रतम् ॥ १ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—श्री शुकदेव गोस्वामी ने कहा; हेमन्ते—हेमन्त (जाड़े की) ऋतु में; प्रथमे—प्रथम; मासि—महीने में; नन्द-ब्रज—नन्द महाराज के ग्वालों का गाँव; कुमारिकाः—अविवाहित लड़कियों ने; चेरुः—सम्पन्न किया; हविष्यम्—बिना मसाले की खिचड़ी; भुञ्जानाः—खाकर; कात्यायनी—देवी कात्यायनी का; अर्चन-व्रतम्—पूजा का व्रत।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : हेमन्त ऋतु के पहले मास में गोकुल की अविवाहिता लड़कियों ने कात्यायनी देवी का पूजा-व्रत रखा। पूरे मास उन्होंने बिना मसाले की खिचड़ी खाई।

तात्पर्य : हेमन्ते शब्द मार्गशीर्ष मास का सूचक है, जो पाश्चात्य कैलेंडर के अनुसार लगभग मध्य नवम्बर से मध्य दिसम्बर तक का समय है। श्रील प्रभुपाद ने भगवान् श्रीकृष्ण (भाग १, अध्याय २२) में टीका की है कि सर्वप्रथम गोपियों ने हविष्यान्न खाया। यह हविष्यान्न एक प्रकार का भोजन है, जो मूँग की दाल तथा चावल को एक साथ पकाकर तैयार किया जाता है, जिसमें हल्दी या कोई मसाला नहीं डाला जाता। वैदिक आदेशानुसार इस तरह का भोजन किसी अनुष्ठान को करने के पूर्व शरीर-शुद्धि हेतु किया जाता है।

आप्लुत्याम्भसि कालिन्ध्या जलान्ते चोदितेऽरुणे

कृत्वा प्रतिकृतिं देवीमानर्चुर्नृप सैकतीम् ।
गन्धैर्माल्यैः सुरभिभिर्बलिभिर्धूपदीपकैः
उच्चावचैश्चोपहारैः प्रवालफलतण्डुलैः ॥ ३ ॥

शब्दार्थ

आप्लुत्य—स्नान करके; अम्भसि—जल में; कालिन्द्याः—यमुना के; जल-अन्ते—नदी के तट पर; च—तथा; उदिते—उदय होने वाले; अरुणे—तड़के; कृत्व—करके; प्रति-कृतिम्—अर्चाविग्रह; देवीम्—देवी; आनर्चुः—पूजा की; नृप—हे राजा परीक्षित; सैकतीम्—मिट्टी की; गन्धैः—चन्दन तथा अन्य सुगन्धित द्रव्यों से; माल्यैः—मालाओं से; सुरभिभिः—सुगन्धित; बलिभिः—भेंटों से; धूप-दीपकैः—धूप तथा दीपकों से; उच्च-अवचैः—ऐश्वर्यवान तथा सीधीसादी भी; च—तथा; उपहारैः—भेंटों से; प्रवाल—कोंपल; फल—फल; तण्डुलैः—तथा सुपारी से।

हे राजन्, सूर्योदय होते ही यमुना के जल में स्नान करके वे गोपियाँ नदी के तट पर देवी दुर्गा का मिट्टी का अर्चाविग्रह बनातीं। तत्पश्चात् वे चन्दन लेप जैसी सुगन्धित सामग्री और महँगी और साधारण वस्तुओं यथा दीपक, फल, सुपारी, कोंपलों तथा सुगन्धित मालाओं और अगुरु के द्वारा उनकी पूजा करतीं।

तात्पर्य : बलिभिः शब्द वस्त्र, आभूषण, भोजन इत्यादि भेंटों का सूचक है।

कात्यायनि महामाये महायोगिन्यधीश्वरि ।
नन्दगोपसुतं देवि पतिं मे कुरु ते नमः ।
इति मन्त्रं जपन्त्यस्ताः पूजां चक्रुः कुमारिकाः ॥ ४ ॥

शब्दार्थ

कात्यायनी—हे देवी कात्यायनी; महा-माये—हे महामाया; महा-योगिनि—हे महायोगिनी; अधीश्वरि—हे शक्तिमान नियंत्रक; नन्द-गोप-सुतम्—महाराज नन्द के पुत्र को; देवि—हे देवी; पतिम्—पति; मे—मेरा; कुरु—बना दें; ते—आपको; नमः—नमस्कार; इति—इन शब्दों से; मन्त्रम्—मंत्र; जपन्त्यः—जपती हुई; ताः—उन; पूजाम्—पूजा; चक्रुः—सम्पन्न किया; कुमारिकाः—अविवाहिता लड़कियों ने।

प्रत्येक अविवाहिता लड़की ने निम्नलिखित मंत्र का उच्चारण करते हुए उनकी पूजा की:
“हे देवी कात्यायनी, हे महामाया, हे महायोगिनी, हे अधीश्वरी, आप महाराज नन्द के पुत्र को मेरा पति बना दें। मैं आपको नमस्कार करती हूँ।”

तात्पर्य : विभिन्न आचार्यों के अनुसार इस श्लोक में उल्लिखित देवी दुर्गा मोहमाया नहीं अपितु योगमाया कहलाने वाली अंतरंगा शक्ति हैं। नारद पञ्चरात्र में श्रुति तथा विद्या के वार्तालाप में भगवान् की अन्तरंगा शक्ति और बहिरंगा शक्ति एवं मोहमाया तथा योगमाया का अन्तर बताया गया है—

जानात्येकापरा कान्तं सैवा दुर्गा तदात्मिका ।

या परा परमा शक्तिर्महाविष्णुस्वरूपिणी ॥

यस्या विज्ञानमात्रेण पराणां परमात्मनः ।

मुहूर्ताद् देवदेवस्य प्राप्तिर्भवति नान्यथा ॥

एकेयं प्रेमसर्वस्वस्वभावा गोकुलेश्वरी ।

अनया सुलभो ज्ञेय आदिदेवोऽखिलेश्वरः ॥

अस्या आवारिकशक्तिर्महामायाखिलेश्वरी ।

यया मुग्धं जगत्सर्वं सर्वं देहाभिमानिनः ॥

“भगवान् की अपराशक्ति दुर्गा कहलाती है, जो भगवान् की प्रेमाभक्ति में समर्पित हैं। भगवान् की शक्ति होने के कारण यह अपराशक्ति उनसे अभिन्न है। एक अन्य पराशक्ति है, जिसका आध्यात्मिक स्वरूप साक्षात् भगवान् जैसा ही है। इस पराशक्ति को वैज्ञानिक ढंग से समझ लेने मात्र से सभी आत्माओं के परमात्मा, समस्त ईश्वरों के ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है। उन्हें प्राप्त करने की कोई अन्य विधि नहीं है। यह पराशक्ति गोकुलेश्वरी अर्थात् गोकुल की देवी कहलाती है। वे स्वभाव से भगवत्प्रेम में सदैव मग्न रहती हैं और उन्हीं के माध्यम से सभी के स्वामी, आदि ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है। इस अन्तरंगा शक्ति की एक आच्छादक शक्ति होती है, जो महामाया कहलाती है। और वही भौतिक जगत पर शासन चलाती है। वास्तव में वह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को मोहती है, जिसके कारण ब्रह्माण्ड के भीतर का हर प्राणी अपनी पहचान भौतिक शरीर के रूप में करता है।”

उपर्युक्त कथन से यह समझा जा सकता है कि भगवान् की अंतरंगा तथा बहिरंगा अर्थात् परा तथा अपरा शक्तियाँ क्रमशः योगमाया तथा महामाया के रूप में हैं। कभी कभी दुर्गा नाम अन्तरंगा पराशक्ति के द्योतन हेतु प्रयुक्त किया जाता है जैसाकि *पञ्चरात्र* में वर्णित है : “कृष्ण की पूजा के लिए प्रयुक्त किये जानेवाले सारे मंत्रों में अधिष्ठात्री देवी दुर्गा कहलाती है।” इस तरह परब्रह्म कृष्ण की महिमा और पूजा में प्रयुक्त दिव्य ध्वनियों में उस विशिष्ट मंत्र की अधिष्ठात्री देवी दुर्गा कहलाती है। अतः दुर्गा नाम उस व्यक्तित्व का सूचक है, जो भगवान् की अन्तरंगा शक्ति के रूप में कार्य करता है और *शुद्धसत्त्व* के पद पर होता है। यह अन्तरंगा शक्ति कृष्ण की बहन, एकांशा या सुभद्रा मानी जाती है। वृन्दावन की गोपियाँ इसी दुर्गा की पूजा करती थीं। कई आचार्यों ने इंगित किया है कि सामान्य लोग कभी कभी मोहग्रस्त होकर सोचते हैं कि महामाया तथा दुर्गा नाम भगवान् की बहिरंगा शक्ति के लिए ही प्रयुक्त

होते हैं।

यदि हम यह मान लें कि गोपियाँ बहिरंगा माया की पूजा करती थीं तो इसमें उनका कोई दोष नहीं है क्योंकि कृष्ण की लीलाओं में वे समाज के सामान्य जन की भूमिका निभा रही थीं। इस सम्बन्ध में श्रील प्रभुपाद की टीका है : “वैष्णव लोग सामान्यतया किसी देवता की पूजा नहीं करते। श्रील नरोत्तम दास ठाकुर ने शुद्ध भक्ति में अग्रसर होने के इच्छुक व्यक्ति को समस्त देवताओं की पूजा करने से कठोरता से वर्जित किया है। फिर भी गोपियाँ, जिनका कृष्ण-प्रेम अद्वितीय है, दुर्गा की पूजा करती देखी जाती हैं। देवताओं के पूजक भी कभी कभी उल्लेख करते हैं कि गोपियाँ भी देवी दुर्गा की पूजा करती थीं किन्तु हमें गोपियों के उद्देश्य को समझना चाहिए। सामान्यतया लोग किसी भौतिक वर के लिए देवी दुर्गा की पूजा करते हैं। यहाँ तो गोपियाँ कृष्ण को प्रसन्न करने या उनकी सेवा करने के लिए कोई भी साधन अपना सकती थीं। यह गोपियों की सर्वोत्कृष्ट विशिष्टता थी। उन्होंने कृष्ण को पति रूप में पाने के लिए दुर्गा देवी की पूरे एक मास तक पूजा की। प्रतिदिन वे नन्द महाराज के पुत्र, कृष्ण को पति रूप में पाने के लिए प्रार्थना करती थीं।”

निष्कर्ष यह निकला कि कृष्ण के निष्ठावान भक्त दिव्य गोपियों में किसी भौतिक गुण के विद्यमान होने की कभी कल्पना नहीं करेंगे क्योंकि गोपियाँ कृष्ण की सर्वोच्च भक्त हैं। उनके समस्त कार्यों का एकमात्र लक्ष्य कृष्ण से प्रेम करना और उन्हें प्रसन्न करना था और यदि हम मूर्खतावश उनके कार्यकलापों को सांसारिक मानते हैं, तो फिर हम कृष्णभावनामृत को कदापि नहीं समझ सकेंगे।

एवं मासं व्रतं चेरुः कुमार्यः कृष्णचेतसः ।

भद्रकालीं समानर्चुर्भूयान्नन्दसुतः पतिः ॥ ५ ॥

शब्दार्थ

एवम्—इस प्रकार; मासम्—पूरे मास भर; व्रतम्—व्रत; चेरुः—रखा; कुमार्यः—लड़कियों ने; कृष्ण-चेतसः—कृष्ण में लीन मनोवाली; भद्र-कालीम्—देवी कात्यायनी को; समानर्चुः—ठीक से पूजा; भूयात्—भगवान् करे ऐसा हो; नन्द-सुतः—राजा नन्द का पुत्र; पतिः—मेरा पति।

इस प्रकार उन लड़कियों ने पूरे मास अपना व्रत रखा और अपने मन को कृष्ण में पूर्णतया लीन करते हुए इस विचार पर ध्यान लगाये रखा कि “राजा नन्द का पुत्र मेरा पति बने” इस प्रकार से देवी भद्रकाली की पूजा की।

ऊषस्युत्थाय गोत्रैः स्वैरन्योन्याबद्धबाहवः ।

कृष्णमुच्चैर्जगुर्यान्त्यः कालिन्द्यां स्नातुमन्वहम् ॥ ६ ॥

शब्दार्थ

ऊषसि—तड़के; उत्थाय—उठकर; गोत्रैः—नामों से; स्वैः—अपने अपने; अन्योन्य—एक-दूसरे का; आबद्ध—पकड़कर; बाहवः—हाथ; कृष्णम्—कृष्ण की महिमा हेतु; उच्चैः—उच्च स्वर से; जगुः—गाने लगतीं; यान्त्यः—जाते हुए; कालिन्द्याम्—यमुना नदी को; स्नातुम्—स्नान करने के लिए; अनु-अहम्—प्रतिदिन।

प्रतिदिन वे बड़े तड़के उठतीं। एक-दूसरे का नाम ले लेकर वे सब हाथ पकड़कर स्नान के लिए कालिन्दी जाते हुए कृष्ण की महिमा का जोर जोर से गायन करतीं।

नद्याः कदाचिदागत्य तीरे निक्षिप्य पूर्ववत् ।

वासांसि कृष्णं गायन्त्यो विजह्वः सलिले मुदा ॥ ७ ॥

शब्दार्थ

नद्याः—नदी के; कदाचित्—एक बार; आगत्य—आकर; तीरे—तट पर; निक्षिप्य—उतारकर; पूर्व-वत्—पहिले जैसा; वासांसि—अपने वस्त्र; कृष्णम्—कृष्ण के विषय में; गायन्त्यः—गाती हुईं; विजह्वः—खेलने लगतीं; सलिले—जल में; मुदा—प्रसन्नतापूर्वक।

एक दिन वे नदी के तट पर आईं और पहले की भाँति अपने वस्त्र उतारकर जल में क्रीड़ा करने लगीं और कृष्ण के यश का गान करने लगीं।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर के अनुसार यह घटना उस दिन की है जब गोपियों ने अपना व्रत पूरा किया और जिस दिन पूर्णमासी थी। अपने व्रत के भलीभाँति पूर्ण होने के उपलक्ष्य में उन्होंने वृषभानु की पुत्री तथा अपनी विशिष्टतः प्रिय राधारानी को अन्य प्रमुख गोपियों समेत आमंत्रित किया और उन सबों को लेकर नदी में स्नान करने आईं। उनकी जलक्रीड़ा *अवभृथ स्नान* जैसी थी अर्थात् वह औपचारिक स्नान जो किसी वैदिक यज्ञ के पूरा होने के तुरंत पश्चात् किया जाता है।

श्रील प्रभुपाद ने निम्न प्रकार से टीका की है, “ भारतीय लड़कियों तथा स्त्रियों में यह पुरानी प्रथा है कि जब वे नदी में स्नान करती हैं, तो अपने सारे वस्त्र तट पर रख देती हैं और पूरी तरह नग्न होकर जल में डुबकी लगाती हैं। नदी के जिस भाग में वे स्नान करती थीं वहाँ पुरुषों का प्रवेश वर्जित था और यह प्रथा अब भी चालू है। भगवान् ने उन अविवाहिता कन्याओं के मन की बात जानते हुए उन्हें वांछित फल दिया। उन्होंने प्रार्थना की थी कि उन्हें कृष्ण पति रूप में प्राप्त हों और कृष्ण उनकी यह इच्छा पूरी कर देना चाहते थे।”

भगवांस्तदभिप्रेत्य कृष्णो योगेश्वरेश्वरः ।
वयस्यैरावृतस्तत्र गतस्तत्कर्मसिद्धये ॥ ८ ॥

शब्दार्थ

भगवान्—भगवान्; तत्—वह; अभिप्रेत्य—देखकर; कृष्णः—श्रीकृष्ण; योग-ईश्वर-ईश्वरः—योगेश्वरों के भी ईश्वर; वयस्यैः—तरुण संगियों द्वारा; आवृतः—घिरे; तत्र—वहाँ; गतः—गये; तत्—उन कन्याओं के; कर्म—अनुष्ठान; सिद्धये—फल के लिए विश्वास दिलाने।

योगेश्वरों के भी ईश्वर भगवान् कृष्ण इस बात से अवगत थे कि गोपियाँ क्या कर रही हैं अतएव वे अपने समवयस्क संगियों के साथ गोपियों को उनकी साधना का फल देने गये।

तात्पर्य : योगेश्वरों के भी ईश्वर होने के कारण भगवान् कृष्ण आसानी से गोपियों की इच्छाएँ समझ सकते थे और उनकी पूर्ति भी कर सकते थे। सम्मानित कुटुम्बों की तरुणियों की तरह एक तरुण बालक के समक्ष गोपियों का नग्न अवस्था में प्रकट होना अपने प्राण त्यागने की अपेक्षा अधिक लज्जाशील था। फिर भी कृष्ण ने उन्हें जल से बाहर आने और नमस्कार करने के लिए बाध्य कर दिया। यद्यपि गोपियों के शारीरिक अंग पूर्णतया विकसित थे और कृष्ण उनसे एकान्त स्थान में मिले थे तथा उन्हें पूरी तरह से अपने वश में कर लिया था किन्तु उनके मन में भौतिक इच्छा का लेश भी नहीं था क्योंकि भगवान् पूर्णतया दिव्य हैं। भगवान् कृष्ण दिव्य आनन्द के सागर हैं और वे आध्यात्मिक स्तर पर सामान्य काम-भावना से पूर्णतया मुक्त होकर अपने आनन्द को बाँटना चाह रहे थे।

श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर कहते हैं कि यहाँ कृष्ण के जिन संगियों का उल्लेख हुआ है वे केवल दो-तीन वर्ष के नन्हे बच्चे थे। वे एकदम नंगे थे और उन्हें स्त्री तथा पुरुष में अन्तर का पता नहीं था। कृष्ण जब गौवें चराने जाते तो वे भी उनके पीछे-पीछे हो लेते क्योंकि वे कृष्ण के बिना नहीं रह सकते थे।

तासां वासांस्युपादाय नीपमारुह्य सत्वरः ।
हसद्भिः प्रहसन्बालैः परिहासमुवाच ह ॥ ९ ॥

शब्दार्थ

तासाम्—उन कन्याओं के; वासांसि—वस्त्रों को; उपादाय—लेकर; नीपम्—कदम्ब वृक्ष में; आरुह्य—चढ़कर; सत्वरः—फुर्ती से; हसद्भिः—हँसते हुए; प्रहसन्—स्वयं जोर से हँसते; बालैः—बालकों के साथ; परिहासम्—मजाक में; उवाच ह—कहा।

लड़कियों के वस्त्र उठाकर वे तेजी से कदम्ब वृक्ष की चोटी पर चढ़ गये। तत्पश्चात् जब वे जोर से हँसे तो उनके साथी भी हँस पड़े और उन्होंने उन लड़कियों से ठिठोली करते हुए कहा।

अत्रागत्याबलाः कामं स्वं स्वं वासः प्रगृह्यताम् ।
सत्यं ब्रवाणि नो नर्म यद्युयं व्रतकर्षिताः ॥ १० ॥

शब्दार्थ

अत्र—यहाँ; आगत्य—आकर; अबलाः—हे लड़कियो; कामम्—यदि चाहती हो; स्वम् स्वम्—अपने अपने; वासः—वस्त्र;
प्रगृह्यताम्—ले जाओ; सत्यम्—सच; ब्रवाणि—मैं सच कह रहा हूँ; न—नहीं; उ—प्रत्युत; नर्म—मजाक; यत्—क्योंकि;
यूयम्—तुम; व्रत—तपस्या के व्रत से; कर्षिताः—थकी हुई।

[भगवान् कृष्ण ने कहा] : हे लड़कियो, तुम चाहो तो एक एक करके यहाँ आओ और अपने वस्त्र वापस ले जाओ। मैं तुम लोगों से सच कह रहा हूँ। मैं मजाक नहीं कर रहा हूँ क्योंकि मैं देख रहा हूँ कि तुम लोग तपस्यापूर्ण व्रत करने से थक गई हो।

न मयोदितपूर्व वा अनृतं तदिमे विदुः ।
एकैकशः प्रतीच्छध्वं सहैवेति सुमध्यमाः ॥ ११ ॥

शब्दार्थ

न—कभी नहीं; मया—मेरे द्वारा; उदित—कहा गया; पूर्वम्—इसके पहले; वै—निश्चयपूर्वक; अनृतम्—झूठ; तत्—वह;
इमे—ये बालक; विदुः—जानते हैं; एक-एकशः—एक-एक करके; प्रतीच्छध्वम्—(तुम अपने वस्त्र) उठा लो; सह—या सभी
मिलकर; एव—निस्सन्देह; इति—इस प्रकार; सु-मध्यमाः—हे क्षीण कटिवाली बालाओ।

मैंने पहले कभी झूठ नहीं बोला और ये बालक इसे जानते हैं। अतएव हे क्षीण कटिवाली बालाओ, या तो एक एक करके या फिर सभी मिलकर इधर आओ और अपने वस्त्र उठा ले जाओ।

तस्य तत्क्ष्वेलितं दृष्ट्वा गोप्यः प्रेमपरिप्लुताः ।
व्रीडिताः प्रेक्ष्य चान्योन्यं जातहासा न निर्ययुः ॥ १२ ॥

शब्दार्थ

तस्य—उसका; तत्—वह; क्ष्वेलितम्—मजाकिया व्यवहार; दृष्ट्वा—देखकर; गोप्यः—गोपियाँ; प्रेम-परिप्लुताः—भगवत्प्रेम में
पूरी तरह निमग्न; व्रीडिताः—सकुचाई; प्रेक्ष्य—देखकर; च—तथा; अन्योन्यम्—एक-दूसरे को; जात-हासाः—हँसी आने के
कारण; न निर्ययुः—नहीं निकलीं।

यह देखकर कि कृष्ण उनसे किस तरह ठिठोली कर रहे हैं, गोपियाँ उनके प्रेम में पूरी तरह निमग्न हो गईं और उलझन में होते हुए भी एक दूसरे की ओर देख-देखकर हँसने तथा परस्पर परिहास करने लगीं। लेकिन तो भी वे जल से बाहर नहीं आईं।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर ने इस श्लोक की व्याख्या इस प्रकार की है :

गोपियाँ अत्यन्त सम्माननीय परिवार की थीं अतः उन्होंने कृष्ण से तर्क किया होगा “आप हमारे वस्त्रों को नदी के तट पर छोड़कर क्यों नहीं चले जाते?” तब कृष्ण ने उत्तर दिया होगा, “लेकिन तुम

तो अनेक हो अतः तुममें से कुछ लड़कियाँ अन्य लड़कियों के वस्त्र ले सकती हैं।” गोपियों ने उत्तर दिया होगा, “हम ईमानदार हैं और कभी कोई चीज नहीं चुरातीं। हम पराये की सम्पत्ति को छूती तक नहीं।” तब कृष्ण ने कहा होगा, “यदि ऐसा है, तो बाहर आकर अपने कपड़े ले लो। इसमें कौन सी कठिनाई है?” “जब गोपियों ने कृष्ण के संकल्प को देखा तो वे प्रेम पूरित आनंद से भर गईं। यद्यपि वे सकुचाई थीं किन्तु कृष्ण का ऐसा आकर्षण देखकर अत्यन्त हर्षित थीं। कृष्ण उनसे इस तरह परिहास कर रहे थे मानो वे उनकी पत्नियाँ या प्रेमिकाएँ हों और गोपियाँ तो बस यही चाहती थीं। किन्तु वे सकुचाई थीं कि वे उन्हें नग्न देख जो रहे थे। किन्तु तो भी वे उनके परिहास युक्त शब्दों पर अपनी हँसी नहीं रोक पा रही थीं और वे भी परस्पर मजाक करने लगीं। एक गोपी ने दूसरे से निवेदन किया, “आगे जाओ, तुम सबसे पहले जाओ और हमें देखने दो कि कृष्ण तुम्हारे साथ क्या कोई चाल चलते हैं। तब फिर हम भी जायेंगी।”

एवं ब्रुवति गोविन्दे नर्मणाक्षिप्तचेतसः ।

आकण्ठमग्नाः शीतोदे वेपमानास्तमब्रुवन् ॥ १३ ॥

शब्दार्थ

एवम्—इस तरह; ब्रुवति—बोलते हुए; गोविन्दे—गोविन्द; नर्मणा—उनके मजाकिये शब्दों से, दिल्लगी से; आक्षिप्त—क्षुब्ध; चेतसः—मनवाले; आ-कण्ठ—गले तक; मग्नाः—लीन; शीत—ठंडे; उदे—जल में; वेपमानाः—काँपती; तम्—उनसे; अब्रुवन्—बोलीं।

जब श्रीगोविन्द इस तरह बोले तो गोपियों के मन उनकी मजाकिया वाणी (परिहास) से पूरी तरह मुग्ध हो गये। वे ठंडे जल में गले तक धँसी रहकर काँपने लगीं। अतः वे उनसे इस तरह बोलीं।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर ने कृष्ण तथा गोपियों के बीच परिहास का निम्नलिखित उदाहरण दिया है—

कृष्ण : अरी पक्षी जैसी कन्याओ! यदि तुम यहाँ नहीं आओगी तो इन शाखाओं में टँगे वस्त्रों का मैं झूला बनाऊँगा और उसमें लेट जाऊँगा क्योंकि मैं रात-भर जगा हूँ और अब मुझे नींद आ रही है।

गोपियाँ : अरे हमारे प्यारे ग्वाले! तुम्हारी गौवें घास की लालच में गुफा में चली गई हैं। तुम तुरन्त जाकर उन्हें उचित राह पर लाकर चराओ।

कृष्ण : अरी गोपियो! अब तो आओ। तुम्हें जल्दी ही यहाँ से ब्रज जाकर अपने घर का काम-

काज करना चाहिए। क्यों अपने माता-पिता तथा अन्य गुरुजनों के लिए सरदर्द बन रही हो ?

गोपियाँ : हे प्रिय कृष्ण! हम पूरे मास तक यहाँ से नहीं जायेंगी क्योंकि हम कात्यायनी का यह व्रत अपने माता-पिता तथा गुरुजनों के कहने पर ही कर रही हैं।

कृष्ण : अरी मेरी प्यारी तपस्विनियो! तुम्हें देखकर मेरे मन में भी गृहस्थ जीवन से वैराग्य उत्पन्न हो चुका है। मैं यहाँ एक मास रुककर बादलों में रहने का व्रत पूरा करना चाहता हूँ। यदि तुम लोग मुझपर दया दिखा सको तो मैं नीचे आकर तुम लोगों के साथ उपवास पूरा कर सकता हूँ।

गोपियाँ कृष्ण के मजाकिया शब्दों से पूर्णतया मोहित थीं किन्तु लज्जावश गले तक पानी के भीतर रहती रहीं, वे ठंड से कँपकँपाती इस प्रकार बोलीं।

मानयं भोः कृथास्त्वां तु नन्दगोपसुतं प्रियम् ।

जानीमोऽङ्ग ब्रजश्लाघ्यं देहि वासांसि वेपिताः ॥ १४ ॥

शब्दार्थ

मा—मत; अनयम्—अनीति, अन्याय; भोः—हे कृष्ण; कृथाः—करो; त्वाम्—तुमको; तु—दूसरी ओर; नन्द-गोप—महाराज नन्द के; सुतम्—पुत्र को; प्रियम्—प्रिय; जानीमः—जानती हैं; अङ्ग—हे प्रिय; ब्रज-श्लाघ्यम्—ब्रज-भर में विख्यात; देहि—कृपा करके दे दीजिये; वासांसि—हमारे वस्त्र; वेपिताः—कँपकँपा रही हम सबों को।

[गोपियों ने कहा] : हे कृष्ण, अन्यायी मत बनो, हम जानती हैं कि तुम नन्द के माननीय पुत्र हो और ब्रज का हर व्यक्ति तुम्हारा सम्मान करता है। हमें भी तुम अत्यन्त प्रिय हो। कृपा करके हमारे वस्त्र लौटा दो। हम ठंडे जल में काँप रही हैं।

श्यामसुन्दर ते दास्यः करवाम तवोदितम् ।

देहि वासांसि धर्मज्ञ नो चेद्राज्ञे ब्रुवाम हे ॥ १५ ॥

शब्दार्थ

श्यामसुन्दर—हे श्यामसुन्दर; ते—तुम्हारी; दास्यः—दासियाँ; करवाम—हम करेंगी; तव—तुम्हारे द्वारा; उदितम्—जो भी कहा जायेगा; देहि—दे दो; वासांसि—हमारे वस्त्र; धर्म-ज्ञ—हे धर्म के ज्ञाता; न—नहीं तो; उ—निस्सन्देह; चेत्—यदि; राज्ञे—राजा से; ब्रुवामः—हम कहेंगी; हे—हे कृष्ण।

हे श्यामसुन्दर, हम तुम्हारी दासियाँ हैं और तुम जो भी कहोगे करेंगी। किन्तु हमारे वस्त्र हमें लौटा दो। तुम धार्मिक नियमों के ज्ञाता हो और तुम यदि हमें हमारे वस्त्र नहीं दोगे, तो हम राजा से कह देंगी। मान जाओ।

श्रीभगवानुवाच

भवत्यो यदि मे दास्यो मयोक्तं वा करिष्यथ ।

अत्रागत्य स्ववासांसि प्रतीच्छत शुचिस्मिताः ।

नो चेन्नाहं प्रदास्ये किं क्रुद्धो राजा करिष्यति ॥ १६ ॥

शब्दार्थ

श्री-भगवान् उवाच—भगवान् ने कहा; भवत्यः—तुम सब; यदि—यदि; मे—मेरी; दास्यः—दासियाँ; मया—मेरे द्वारा; उक्तम्—कहा गया; वा—अथवा; करिष्यथ—तुम करोगी; अत्र—यहाँ; आगत्य—आकर; स्व-वासांसि—अपने अपने वस्त्र; प्रतीच्छत—चुन लो; शुचि—ताजी; स्मिताः—हँसी; न उ—नहीं तो; चेत्—यदि; न—नहीं; अहम्—मैं; प्रदास्ये—दे दूँगा; किम्—क्या; क्रुद्धः—नाराज; राजा—राजा; करिष्यति—कर लेगा।

भगवान् ने कहा : यदि तुम सचमुच मेरी दासियाँ हो और मैं जो कहता हूँ उसे वास्तव में करोगी तो फिर अपनी अबोध भाव से मुस्कान भरकर यहाँ आओ और अपने अपने वस्त्र चुन लो। यदि तुम मेरे कहने के अनुसार नहीं करोगी तो मैं तुम्हारे वस्त्र वापस नहीं दूँगा। और यदि राजा नाराज भी हो जाये तो वह मेरा क्या बिगाड़ सकता है ?

तात्पर्य : श्रील प्रभुपाद टीका करते हैं “जब गोपियों ने देखा कि कृष्ण दृढ़ एवं अटल बने हुए हैं तब उनके पास उनकी आज्ञापालन करने के सिवाय कोई चारा न था।”

ततो जलाशयात्सर्वा दारिकाः शीतवेपिताः ।

पाणिभ्यां योनिमाच्छाद्य प्रोत्तेरुः शीतकर्षिताः ॥ १७ ॥

शब्दार्थ

ततः—तत्पश्चात्; जल-आशयात्—नदी में से बाहर; सर्वाः—सभी; दारिकाः—युवतियाँ; शीत-वेपिताः—जाड़े से काँपती; पाणिभ्याम्—अपने हाथों से; योनिम्—अपने गुप्त अंग को; आच्छाद्य—ढककर; प्रोत्तेरुः—बाहर आगई; शीत-कर्षिताः—जाड़े से पीड़ित।

तत्पश्चात् कड़ाके की शीत से काँपती सारी युवतियाँ अपने अपने हाथों से अपने गुप्तांग ढके हुए जल के बाहर निकलीं।

तात्पर्य : गोपियों ने कृष्ण को आश्चस्त किया था कि वे उनकी नित्य दासियाँ हैं और उनका कहना मानने को तैयार हैं अतः वे अपनी ही बातों से हार खा चुकी थीं। उन्होंने सोचा कि यदि वे विलम्ब करती हैं, तो इस बीच अन्य कोई आ सकता है, जो उनके लिए असह्य होगा। गोपियाँ कृष्ण से इतना अधिक प्रेम करती थीं कि इस विषम स्थिति में भी उनके प्रति उनका अनुराग बढ़ता जा रहा था और वे उनके सान्निध्य में रहने के लिए और भी उतावली हो रही थीं। ऐसी विषम परिस्थिति में उन्होंने अपने आपको नदी में डुबो देने का भी विचार नहीं किया।

वे इस निष्कर्ष पर पहुँचीं कि अपनी दुविधा त्यागकर अपने प्रिय कृष्ण के पास जाने के अतिरिक्त उनके पास कोई चारा न था। इस तरह जब गोपियाँ परस्पर आश्वस्त हो लीं कि कोई अन्य विकल्प नहीं है, तो वे कृष्ण से मिलने के लिए जल से निकलकर बाहर आ गईं।

भगवानाहता वीक्ष्य शुद्ध भावप्रसादितः ।

स्कन्धे निधाय वासांसि प्रीतः प्रोवाच सस्मितम् ॥ १८ ॥

शब्दार्थ

भगवान्—भगवान् द्वारा; आहताः—विह्वल; वीक्ष्य—देखकर; शुद्ध—शुद्ध; भाव—स्नेह से; प्रसादितः—संतुष्ट; स्कन्धे—अपने कंधे पर; निधाय—रखकर; वासांसि—उनके वस्त्र; प्रीतः—प्यार से; प्रोवाच—बोले; स-स्मितम्—हँसते हुए।

जब भगवान् ने देखा कि गोपियाँ किस तरह विह्वल हैं, तो वे उनके शुद्ध प्रेम-भाव से संतुष्ट हो गये। उन्होंने अपने कन्धे पर उनके वस्त्र उठा लिए और हँसते हुए उनसे बड़े ही स्नेहपूर्वक बोले।

तात्पर्य : श्रील प्रभुपाद की टीका है, “गोपियों का सहज समर्पण इतना शुद्ध था कि कृष्ण तुरन्त ही उनसे प्रसन्न हो उठे। जिन कुमारी गोपियों ने कात्यायनी से कृष्ण को पति रूप में पाने की प्रार्थना की थी इस प्रकार से वे प्रसन्न हो गईं। कोई स्त्री अपने पति के अतिरिक्त अन्य किसी के समक्ष नंगी नहीं हो सकती। कुमारी गोपियों ने कृष्ण को पति रूप में चाहा था और उन्होंने इस प्रकार उनकी इच्छा पूरी कर दी।”

गोपियों जैसी राजसी युवतियों के लिए किसी युवक के समक्ष नग्न खड़ी होना मृत्यु से भी बढ़कर था फिर भी उन्होंने कृष्ण के आनन्द के लिए सब कुछ त्यागने का निश्चय किया। कृष्ण अपने प्रति उनकी प्रेम-शक्ति को देखना चाहते थे और वे उनकी अनन्य भक्ति से पूरी तरह संतुष्ट हो गये।

यूयं विवस्त्रा यदपो धृतव्रता

व्यगाहतैतत्तदु देवहेलनम् ।

बद्ध्वाञ्जलिं मूर्ध्न्यपनुत्तयेऽंहसः

कृत्वा नमोऽधोवसनं प्रगृह्यताम् ॥ १९ ॥

शब्दार्थ

यूयम्—तुम लोगों ने; विवस्त्राः—नंगी; यत्—क्योंकि; अपः—जल में; धृत-व्रताः—वैदिक अनुष्ठान करते हुए; व्यगाहत—स्नान किया; एतत् तत्—यह; उ—निस्सन्देह; देव-हेलनम्—वरुण तथा अन्य देवताओं के प्रति अपराध; बद्ध्वा अञ्जलिम्—हाथ जोड़कर; मूर्ध्नि—अपने अपने सिरों पर; अपनुत्तये—निराकरण के लिए; अंहसः—अपने अपने पाप कर्म के; कृत्वा नमः—नमस्कार करके; अधः-वसनम्—अपने अपने अधोवस्त्र; प्रगृह्यताम्—वापस लेलो।

[भगवान् कृष्ण ने कहा] : तुम सबों ने अपना व्रत रखते हुए नग्न होकर स्नान किया है, जो कि देवताओं के प्रति अपराध है। अतः अपने पाप के निराकरण के लिए तुम सबों को अपने अपने सिर के ऊपर हाथ जोड़कर नमस्कार करना चाहिए। तभी तुम अपने अधोवस्त्र वापस ले सकती हो।

तात्पर्य : कृष्ण गोपियों को पूर्ण समर्पण करते देखना चाहते थे इसलिए उन्होंने आदेश दिया कि वे अपने सिर के ऊपर हाथ जोड़कर नमस्कार करें। दूसरे शब्दों में, गोपियाँ अपने शरीरों को अब ढक नहीं सकती थीं। हमें मूर्खों की तरह यह कभी नहीं सोचना चाहिए कि भगवान् कृष्ण कोई सामान्य कामान्ध युवक थे, जो गोपियों के नग्न सौन्दर्य का आनन्द लूटना चाहते थे। कृष्ण परब्रह्म हैं और वे वृन्दावन की युवती गोपियों की प्रेम-इच्छा को पूरा करना चाहते थे। इस जगत में ऐसी दशा में हम निश्चित रूप से कामुक हो उठते। किन्तु ईश्वर से अपनी तुलना करना घोर अपराध है और इस अपराध के कारण हम कृष्ण के दिव्य पद को नहीं समझ सकेंगे क्योंकि हम उन्हें अपने ही समान बद्ध मान लेंगे। जो परब्रह्म के आनन्द का भोग करना चाहता है उसके लिए कृष्ण के दिव्य दर्शन से वंचित होना एक बड़ी दुर्घटना होगी।

इत्यच्युतेनाभिहितं व्रजाबला

मत्वा विवस्त्राप्लवनं व्रतच्युतिम् ।

तत्पूर्तिकामास्तदशेषकर्मणां

साक्षात्कृतं नेमुरवद्यमृग्यतः ॥ २० ॥

शब्दार्थ

इति—इन शब्दों द्वारा; अच्युतेन—अच्युत भगवान् द्वारा; अभिहितम्—इंगित की गई; व्रज-अबला:—व्रज की युवतियाँ; मत्वा—मानकर; विवस्त्र—नग्न; आप्लवनम्—स्नान; व्रज-च्युतिम्—अपने व्रत से नीचे गिरकर; तत्-पूर्ति—उसकी पूर्ति; कामा:—इच्छुक; तत्—उस; अशेष-कर्मणाम्—तथा अन्य अनन्त पुण्य कर्मों को; साक्षात्-कृतम्—प्रत्यक्ष फल के प्रति; नेमु:—नमस्कार किया; अवद्य-मृक्—सभी पापों को दूर करनेवाला; यतः—क्योंकि।

इस तरह वृन्दावन की उन युवतियों ने कृष्ण द्वारा कहे गये वचनों पर विचार करके यह मान लिया कि नदी में नग्न स्नान करने से वे अपने व्रत से पतित हुई हैं। किन्तु तो भी वे अपना व्रत पूरा करना चाहती थीं और चूँकि भगवान् कृष्ण समस्त पुण्य कर्मों के प्रत्यक्ष चरमफल हैं अतः अपने पापों को धो डालने के उद्देश्य से उन्होंने कृष्ण को नमस्कार किया।

तात्पर्य : यहाँ पर कृष्णभावनामृत की दिव्य स्थिति का सुस्पष्ट वर्णन हुआ है। गोपियों ने निश्चय

किया कि अपनी तथाकथित पारिवारिक परम्परा और पारम्परिक नैतिकता को त्यागकर भगवान् कृष्ण की शरण ग्रहण करना श्रेयस्कर है। इसका अर्थ यह कदापि नहीं कि कृष्णभावनामृत आन्दोलन अनैतिक कार्यों का समर्थक है। वस्तुतः इस्कान के भक्त संयम तथा सच्चरित्रता के सर्वोच्च मानदण्ड का पालन करते हैं किन्तु उसी के साथ हम कृष्ण की दिव्य स्थिति को मान्यता प्रदान करते हैं। भगवान् कृष्ण ईश्वर हैं अतः उनके मन में युवतियों के साथ भोग-विलास की कोई इच्छा नहीं रहती। जैसाकि इस अध्याय में आगे देखा जायेगा, कृष्ण गोपियों के साथ भोग करने के लिए तनिक भी इच्छुक नहीं थे प्रत्युत वे उनके प्रेम से आकृष्ट थे और उनको तुष्ट करना चाह रहे थे।

सबसे बड़ा अपराध तो भगवान् कृष्ण के कार्यकलापों की नकल करना है। भारत में *प्राकृत सहजियों* का एक वर्ग है, जो कृष्ण के इन कार्यकलापों की नकल करता है और कृष्ण-पूजा के नाम पर नग्न तरुणियों का भोग करना चाहता है। इस्कान आन्दोलन धर्म के इस उपहास का डटकर विरोध करता है क्योंकि मनुष्य के लिए भगवान् का हास्यास्पद अनुकरण सबसे बड़ा अपराध है। इस्कान आन्दोलन में सस्ते अवतारों का अभाव है और इस आन्दोलन का कोई भी भक्त अपने को कृष्ण के पद तक ऊपर नहीं उठा सकता।

पाँच सौ वर्ष पूर्व भगवान् कृष्ण श्री चैतन्य महाप्रभु के रूप में प्रकट हुए जिन्होंने विद्यार्थी जीवन में कठोर ब्रह्मचर्य व्रत का पालन किया और २४ वर्ष की आयु में संन्यास ले लिया जो आजीवन ब्रह्मचारी रहने का व्रत है। चैतन्य महाप्रभु कृष्ण की प्रेमाभक्ति के अपने व्रत को निबाहने के लिए स्त्री-संसर्ग से दृढ़ता के साथ दूर रहते थे। जब ५,००० वर्ष पूर्व कृष्ण स्वयं प्रकट हुए थे तो उन्होंने ये अद्भुत लीलाएँ प्रदर्शित की थीं जो हमारे चित्त को आकर्षित करती हैं। हमें चाहिए कि ईश्वर द्वारा सम्पन्न की गई ऐसी लीलाओं के विषय में सुनकर न तो ईर्ष्या करें, न चकित हों। ऐसा हमारे अज्ञान के कारण है क्योंकि यदि हम इन कार्यों को करने का प्रयास करें तो हमारे शरीर कामासक्त हो जायेंगे। किन्तु कृष्ण परब्रह्म हैं इसलिए वे किसी तरह की भौतिक इच्छा से तनिक भी विचलित नहीं होते। इस तरह यह घटना जिसमें गोपियाँ सारी नैतिकता के मानदण्ड को ताक पर रखकर अपने सिर के ऊपर हाथ जोड़कर नमस्कार करके कृष्ण के आदेश का पालन करती हैं शुद्ध भक्ति का उदाहरण है, धार्मिक नियमों की कोई त्रुटि नहीं है।

वस्तुतः गोपियों का समर्पण सर्व धर्म की सिद्धि है जैसाकि श्रील प्रभुपाद भगवान् श्रीकृष्ण में बताते हैं “गोपियाँ सीधीसादी जीव थीं और कृष्ण जो कुछ भी कहते उसे वे सच मानतीं थीं। वरुणदेव के कोप से अपने को बचाने तथा अपने ब्रतों की पूर्ति करने और अन्ततोगत्वा अपने आराध्य कृष्ण को प्रसन्न करने के लिए ही उन्होंने उनके आदेश का तुरन्त पालन किया। इस प्रकार वे कृष्ण की सर्वोच्च प्रेमिकाएँ तथा परम आज्ञाकारिणी सेविकाएँ बन सकीं।

“गोपियों की कृष्णभावना अतुलनीय है। वास्तव में गोपियों को न तो वरुण की, न ही किसी अन्य देवता की परवाह थी, वे केवल कृष्ण को प्रसन्न करना चाहती थीं।”

तास्तथावनता दृष्ट्वा भगवान्देवकीसुतः ।

वासांसि ताभ्यः प्रायच्छत्करुणस्तेन तोषितः ॥ २१ ॥

शब्दार्थ

ताः—तब; तथा—इस तरह; अवनताः—सिर झुकाते; दृष्ट्वा—देखकर; भगवान्—भगवान्; देवकी-सुतः—देवकीपुत्र, कृष्ण ने; वासांसि—वस्त्र; ताभ्यः—उनको; प्रायच्छत्—लौटा दिया; करुणः—दयालु; तेन—उस कार्य से; तोषितः—सन्तुष्ट।

उन्हें इस प्रकार नमस्कार करते देखकर देवकीपुत्र भगवान् ने उनपर करुणा करके तथा उनके कार्य से संतुष्ट होकर उनके वस्त्र लौटा दिये।

दृढं प्रलब्धास्त्रपया च हापिताः

प्रस्तोभिताः क्रीडनवच्च कारिताः ।

वस्त्राणि चैवापहतान्यथाप्यमुं

ता नाभ्यसूयन्प्रियसङ्गनिर्वृताः ॥ २२ ॥

शब्दार्थ

दृढम्—बुरी तरह से; प्रलब्धाः—ठगी हुई; ऋपया—अपनी लज्जा से; च—तथा; हापिताः—वंचित; प्रस्तोभिताः—मजाक उड़ाई गई; क्रीडन-वत्—गुड़ियों की तरह; च—तथा; कारिताः—करने के लिए बाध्य की गई; वस्त्राणि—उनके वस्त्र; च—तथा; एव—निस्सन्देह; अपहतानि—चुराये हुए; अथ अपि—तो भी; अमुम्—उनके प्रति; ताः—वे; न अभ्यसूयन्—शत्रुभाव नहीं लाई; प्रिय—अपने प्रियतम का; सङ्ग—साथ करने से; निर्वृताः—हर्षित।

यद्यपि गोपियाँ बुरी तरह ठगी जा चुकी थीं, उनके शील-संकोच से उन्हें वंचित किया जा चुका था, उन्हें कठपुतलियों की तरह नचाया गया था और उनका उपहास किया गया था और यद्यपि उनके वस्त्र चुराये गये थे किन्तु उनके मन में श्रीकृष्ण के प्रति रंच-भर भी प्रतिकूल भाव नहीं आया। उल्टे वे अपने प्रियतम के सान्निध्य का यह अवसर पाकर सहज रूप से पुलकित थीं।

तात्पर्य : श्रील प्रभुपाद की टीका है : “गोपियों के इस मनोभाव का वर्णन श्री चैतन्य महाप्रभु

द्वारा हुआ है जब वे प्रार्थना करते हैं, 'हे भगवान् कृष्ण! आप चाहे मेरा आलिंगन करें या अपने पैरों के नीचे रौंद डालें या मेरे समक्ष कभी भी उपस्थित न होकर मेरे हृदय को तोड़ दें। आप जो चाहें सो कर सकते हैं क्योंकि आप कुछ भी करने के लिए स्वतंत्र हैं। किन्तु इतना सब करने पर भी आप सदैव मेरे स्वामी हैं, मेरा कोई दूजा आराध्य नहीं है।' कृष्ण के प्रति गोपियों का यही मनोभाव है।''

परिधाय स्ववासांसि प्रेष्ठसङ्गमसज्जिताः ।

गृहीतचित्ता नो चेलुस्तस्मिन्लज्जायितेक्षणाः ॥ २३ ॥

शब्दार्थ

परिधाय—पहनकर; स्व-वासांसि—अपने अपने वस्त्र; प्रेष्ठ—अपने प्रिय के; सङ्गम—इस मिलन से; सज्जिताः—उनके प्रति पूरी तरह अनुरक्त हुई; गृहीत—चुराये गये; चित्ताः—मनवाली; न—नहीं; उ—निस्सन्देह; चेलुः—हिलडुल सर्की; तस्मिन्—उनपर; लज्जायित—लज्जा से पूर्ण; ईक्षणाः—चितवनें।

गोपियाँ अपने प्रिय कृष्ण से मिलने के लिए आतुर थीं अतएव वे उनके द्वारा मोह ली गईं।

इस तरह अपने अपने वस्त्र पहन लेने के बाद भी वे हिलीही नहीं। वे लजाती हुई उन्हीं पर टकटकी लगाये जहाँ की तहाँ खड़ी रहीं।

तात्पर्य : अपने प्रिय मित्र कृष्ण से मिलने से गोपियाँ उनके प्रति और अधिक अनुरक्त हो गईं। जिस तरह कृष्ण ने उनके वस्त्र चुरा लिए थे उसी तरह उन्होंने उनके मन और प्रेम भी हर लिये थे। गोपियों ने इस घटना को इस बात का प्रमाण मान लिया कि कृष्ण भी उनके प्रति अनुरक्त हैं। अन्यथा वे उनसे इस तरह का खिलवाड़ करने का कष्ट क्यों करते? उन्होंने सोचा कि अब कृष्ण हम पर अनुरक्त हैं अतएव उन्होंने लज्जायुक्त निगाहों से उन्हें देखा और भावमय प्रेम की उठान के कारण वे जहाँ पर खड़ी थीं वहाँ से टस से मस न हो सकीं। कृष्ण ने उनकी लज्जा हर ली थी और उन्हें नंगी ही जल से बाहर निकलने के लिए बाध्य कर दिया था किन्तु अब अपने वस्त्रों से सज्जित हो जाने के बाद उनके समक्ष वे पुनः लजा रही थी। वस्तुतः इस घटना से कृष्ण के समक्ष उनमें विनयशीलता बढ़ गई थी। वे नहीं चाहती थीं कि कृष्ण उन्हें घूर-घूरकर देखें इसलिए उन्होंने ही भगवान् को देखने के अवसर का सावधानी से उपयोग किया।

तासां विज्ञाय भगवान्स्वपादस्पर्शकाम्यया ।

धृतव्रतानां सङ्कल्पमाह दामोदरोऽबलाः ॥ २४ ॥

शब्दार्थ

तासाम्—उन; विज्ञाय—जानकर; भगवान्—भगवान् के; स्व-पाद—अपने पाँवों का; स्पर्श—स्पर्श पाने; काम्यया—इच्छा से; धृत-व्रतानाम्—व्रत धारण करने वाली; सङ्कल्पम्—संकल्प; आह—बोले; दामोदरः—भगवान् दामोदर; अबलाः—लड़कियों से।

भगवान् उन गोपियों के द्वारा किये जा रहे कठोर व्रत के संकल्प को समझ गये। वे यह भी जान गये कि ये बालाएँ उनके चरणकमलों का स्पर्श करना चाहती हैं अतः भगवान् दामोदर कृष्ण उनसे इस प्रकार बोले।

सङ्कल्पो विदितः साध्व्यो भवतीनां मदर्चनम् ।

मयानुमोदितः सोऽसौ सत्यो भवितुमर्हति ॥ २५ ॥

शब्दार्थ

सङ्कल्पः—संकल्प; विदितः—समझ गया; साध्व्यः—हे सती साध्वी लड़कियो; भवतीनाम्—तुम्हारे; मत्-अर्चनम्—मेरी पूजा; मया—मेरे द्वारा; अनुमोदितः—समर्थित; सः असौ—वह; सत्यः—सच; भवितुम्—होए; अर्हति—अवश्य।

“हे साध्वी लड़कियो, मैं समझ गया कि इस तपस्या के पीछे तुम्हारा असली संकल्प मेरी पूजा करना था। तुम्हारी इस अभिलाषा का मैं अनुमोदन करता हूँ और यह अवश्य ही खरा उतरेगा।

तात्पर्य : जिस प्रकार कृष्ण समस्त अशुद्ध इच्छाओं से मुक्त हैं उसी तरह गोपियाँ भी हैं। अतएव पति रूप में कृष्ण को प्राप्त करने का उनका प्रयास निजी इन्द्रियतृप्ति की कामना से प्रेरित न होकर कृष्ण की सेवा करने और उन्हें प्रसन्न रखने की अपार इच्छा से प्रेरित था। अपने प्रगाढ़ प्रेम के कारण गोपियाँ कृष्ण को ईश्वर के रूप में नहीं अपितु समस्त सृष्टि के सबसे निराले बालक के रूप में देखती थीं। वे सुन्दर युवतियाँ होने के कारण अपने प्रेमभाव से ही उन्हें प्रसन्न करना चाहती थीं। कृष्ण उनकी शुद्ध इच्छा को जान गये थे अतः वे परम तुष्ट थे। भगवान् सामान्य कामवासना से ही तुष्ट होने वाले नहीं हैं किन्तु वृन्दावन की गोपियों की गहन प्रेमाभक्ति से वे अभिभूत हो गये।

न मय्यावेशितधियां कामः कामाय कल्पते ।

भर्जिता क्वथिता धानाः प्रायो बीजाय नेशते ॥ २६ ॥

शब्दार्थ

न—नहीं; मयि—मुझमें; आवेशित—लीन; धियाम्—चेतना वाली; कामः—इच्छा; कामाय—भौतिक विषय वासना की ओर; कल्पते—ले जाती है; भर्जिताः—जलाया गया; क्वथिताः—पकाया गया; धानाः—अन्न; प्रायः—अधिकांशतः; बीजाय—नवीन वृद्धि; न इष्यते—उत्पन्न नहीं कर सकते।

जो लोग अपना मन मुझ पर टिका देते हैं उनकी इच्छा उन्हें इन्द्रियतृप्ति की ओर नहीं ले

जाती जिस तरह कि धूप से झुलसे और फिर अग्नि में पकाये गये जौ के बीज नये अंकुर बन कर नहीं उग सकते।

तात्पर्य : यहाँ पर *मय्यावेशितधियाम्* शब्द अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। कोई भी व्यक्ति भक्ति में उच्च स्थान प्राप्त किये बिना अपना मन तथा बुद्धि कृष्ण पर स्थिर नहीं कर सकता क्योंकि कृष्ण शुद्ध आध्यात्मिक हैं। आत्म-साक्षात्कार निष्काम भाव की स्थिति नहीं है अपितु शुद्ध की गई इच्छा है, जिसमें मनुष्य को एकमात्र कृष्ण के आनन्द की कामना होती है। गोपियाँ कृष्ण के प्रति निश्चित रूप से माधुर्य रस से आकृष्ट थीं फिर भी अपने मन तथा अपने सम्पूर्ण अस्तित्व को कृष्ण पर स्थिर करने के बावजूद उनके माधुर्य भाव में कभी कोई भौतिक वासना प्रकट नहीं हुई, प्रत्युत वह ब्रह्माण्ड में न दिखने वाला सर्वोच्च भगवत्प्रेम बन गया।

याताबला व्रजं सिद्धा मयेमा रंस्यथा क्षपाः ।
यदुद्दिश्य व्रतमिदं चेरुरार्यार्चनं सतीः ॥ २७ ॥

शब्दार्थ

यात—अब जाओ; अबला:—हे बालिकाओ; व्रजम्—व्रज; सिद्धा:—इच्छा पूर्ति करके; मया—मेरे साथ; इमा:—ये;
रंस्यथ—तुम बिता सकोगी; क्षपा:—रातें; यत्—जो; उद्दिश्य—मन में रखकर; व्रतम्—व्रत; इदम्—यह; चेरु:—तुमने किया है; आर्या—कात्यायनी देवी की; अर्चनम्—पूजा; सती:—शुद्ध होने से।

हे बालाओ, जाओ, अब व्रज लौट जाओ। तुम्हारी इच्छा पूरी हो गई है क्योंकि तुम आने वाली रातें मेरे साथ बिता सकोगी। हे शुद्ध हृदय वाली गोपियो, देवी कात्यायनी की पूजा करने के पीछे तुम्हारे व्रत का यही तो उद्देश्य था!

श्रीशुक उवाच

इत्यादिष्टा भगवता लब्धकामाः कुमारिकाः ।
ध्यायन्त्यस्तत्पदाम्भोजमृच्छान्निर्विविशुर्व्रजम् ॥ २८ ॥

शब्दार्थ

श्री-शुकः उवाच—श्री शुकदेव गोस्वामी ने कहा; इति—इस प्रकार; आदिष्टा:—आदेश पाकर; भगवता—भगवान् द्वारा;
लब्ध—प्राप्त; कामा:—इच्छाएँ; कुमारिका:—कुमारियाँ; ध्यायन्त्य:—ध्यान करती हुई; तत्—उनके; पद-अम्भोजम्—
चरणकमलों को; कृच्छ्रात्—मुश्किल से; निर्विविशु:—लौट आईं; व्रजम्—व्रज ग्राम।

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : भगवान् द्वारा आदेश दिये जाकर अपनी मनोवांछा पूरी करके वे बालाएँ उनके चरणकमलों का ध्यान करती हुई बड़ी ही मुश्किल से व्रज ग्राम वापस आईं।

तात्पर्य : गोपियों की इच्छा पूरी हो गई थी क्योंकि कृष्ण ने उनका पति बनना स्वीकार कर लिया

था। एक युवती अपने पति के अतिरिक्त अन्य किसी पुरुष के साथ रात कभी नहीं बिता सकती अतः जब कृष्ण आने वाली शरद ऋतु में उन युवतियों के साथ रात में रास नृत्य करने पर राजी हो गये तो इसका अर्थ यही था कि वे पति रूप में प्रेम का प्रतिदान करना मान चुके हैं।

अथ गोपैः परिवृतो भगवान्देवकीसुतः ।

वृन्दावनाद्गतो दूरं चारयन्गाः सहाग्रजः ॥ २९ ॥

शब्दार्थ

अथ—कुछ समय बाद; गोपैः—ग्वालबालों से; परिवृतः—घिरे हुए; भगवान्—भगवान्; देवकी-सुतः—देवकीपुत्र; वृन्दावनात्—वृन्दावन से; गतः—गये; दूरम्—दूर; चारयन्—चराते हुए; गाः—गौवें; सह-अग्रजः—अपने भाई बलराम के साथ।

कुछ काल बाद देवकीपुत्र कृष्ण अपने ग्वालबाल मित्रों से घिरकर तथा अपने बड़े भाई बलराम के संग गौवें चराते हुए वृन्दावन से काफी दूर निकल गये।

तात्पर्य : गोपियों के वस्त्रहरण का वर्णन कर चुकने के बाद शुकदेव गोस्वामी कुछ कर्मकाण्डी ब्राह्मणों की पत्नियों को भगवान् कृष्ण द्वारा वर दिये जाने की भूमिका आरम्भ कर रहे हैं।

निदघार्कातपे तिग्मे छायाभिः स्वाभिरात्मनः ।

आतपत्रायितान्वीक्ष्य द्रुमानाह व्रजौकसः ॥ ३० ॥

शब्दार्थ

निदाघ—गीष्म ऋतु के; अर्क—सूर्य की; आतपे—तपन में; तिग्मे—प्रखर; छायाभिः—छाया के साथ; स्वाभिः—अपनी; आत्मनः—अपने लिए; आतपत्रायितान्—छाता के रूप में; वीक्ष्य—देखकर; द्रुमान्—वृक्षों को; अह—कहा; व्रज-ओकसः—व्रज के बालकों से।

जब सूर्य की तपन प्रखर हो गई तो कृष्ण ने देखा कि सारे वृक्ष मानो उन पर छाया करके छाते का काम कर रहे हैं। तब वे अपने ग्वालमित्रों से इस प्रकार बोले।

हे स्तोककृष्ण हे अंशो श्रीदामन्सुबलार्जुन ।

विशाल वृषभौजस्विन्देवप्रस्थ वरूथप ॥ ३१ ॥

पश्यतैतान्महाभागान्परार्थैकान्तजीवितान् ।

वातवर्षातपहिमान्सहन्तो वारयन्ति नः ॥ ३२ ॥

शब्दार्थ

हे स्तोक-कृष्ण—हे स्तोक कृष्ण; हे अंशो—हे अंशु; श्रीदामन् सुबल अर्जुन—हे श्रीदामा, सुबल तथा अर्जुन; विशाल वृषभ ओजस्विन्—हे विशाल, वृषभ तथा ओजस्वी; देवप्रस्थ वरूथप—हे देवप्रस्थ तथा वरूथप; पश्यत—जरा देखो तो; एतान्—इन; महा-भागान्—परम भाग्यशाली; पर-अर्थ—अन्यों के लाभ हेतु; एकान्त—एकान्त भाव से; जीवितान्—जिनका जीवन;

वात—वायु; वर्ष—वर्षा; आतप—सूर्य की तपन; हिमान्—तथा बर्फ (पाला); सहन्तः—सहते हुए; वारयन्ति—दूर रखते हैं; नः—हमारे लिए ।

भगवान् कृष्ण ने कहा “हे स्तोककृष्ण तथा अंशु, हे श्रीदामा, सुबल तथा अर्जुन, हे वृषभ, ओजस्वी, देवप्रस्थ तथा वरूथप, जरा इन भाग्यशाली वृक्षों को तो देखो जिनके जीवन ही अन्यो के लाभ हेतु समर्पित हैं। वे हवा, वर्षा, धूप तथा पाले को सहते हुए भी इन तत्त्वों से हमारी रक्षा करते हैं।

तात्पर्य : भगवान् कृष्ण पाषाणहृदय कर्मकाण्डी ब्राह्मणों की पत्नियों पर अपनी दया का दान करने की तैयारी कर रहे थे और इन श्लोकों में वे इंगित कर रहे हैं कि अन्यो के कल्याण के लिए समर्पित वृक्ष भी उन ब्राह्मणों से श्रेष्ठ हैं, जो परोपकारी नहीं हैं। निस्सन्देह, कृष्णभावनामृत आन्दोलन के सदस्यों को इस बात का गम्भीरता से अध्ययन करना चाहिए।

अहो एषां वरं जन्म सर्वं प्राण्युपजीवनम् ।

सुजनस्येव येषां वै विमुखा यान्ति नार्थिनः ॥ ३३ ॥

शब्दार्थ

अहो—ओह, जरा देखो तो; एषाम्—इन वृक्षों का; वरम्—श्रेष्ठ; जन्म—जन्म; सर्वं—समस्त; प्राणि—जीवों के लिए; उपजीवनम्—पालन करने वाले; सु-जनस्य इव—महापुरुषों की भाँति; येषाम्—जिनसे; वै—निश्चय ही; विमुखाः—निराश; यान्ति—चले जाते हैं; न—कभी नहीं; अर्थिनः—कुछ चाहने वाले।

जरा देखो, कि ये वृक्ष किस तरह प्रत्येक प्राणी का भरण कर रहे हैं। इनका जन्म सफल है।

इनका आचरण महापुरुषों के तुल्य है क्योंकि वृक्ष से कुछ माँगने वाला कोई भी व्यक्ति कभी निराश नहीं लौटता।

तात्पर्य : उपर्युक्त उद्धरण श्रील प्रभुपाद कृत चैतन्य चरितामृत (आदि ९.४६) से लिया गया है।

पत्रपुष्पफलच्छायामूलवल्कलदारुभिः ।

गन्धनिर्यासभस्मास्थितोक्मैः कामान्वितन्वते ॥ ३४ ॥

शब्दार्थ

पत्र—पत्तियाँ; पुष्प—फूल; फल—फल; छाया—छाया; मूल—जड़; वल्कल—छाल; दारुभिः—तथा लकड़ी द्वारा; गन्ध—अपनी सुगन्ध से; निर्यास—रस से; भस्म—राख से; अस्थि—लुगदी से; तोक्मैः—तथा नये नये कल्लों से; कामान्—इच्छित वस्तुएँ; वितन्वते—प्रदान करते हैं।

ये वृक्ष अपनी पत्तियों, फूलों तथा फलों से, अपनी छाया, जड़ों, छाल तथा लकड़ी से तथा अपनी सुगन्ध, रस, राख, लुगदी और नये नये कल्लों से मनुष्यों की इच्छापूर्ति करते हैं।

एतावज्जन्मसाफल्यं देहिनामिह देहिषु ।
प्राणैरर्थैर्धिया वाचा श्रेयआचरणं सदा ॥ ३५ ॥

शब्दार्थ

एतावत्—इस तक; जन्म—जन्म की; साफल्यम्—सफलता, सिद्धि; देहिनाम्—हर प्राणी की; इह—इस जगत में; देहिषु—
देहधारियों के प्रति; प्राणैः—प्राण से; अर्थैः—धन से; धिया—बुद्धि से; वाचा—वाणी से; श्रेयः—शाश्वत सौभाग्य;
आचरणम्—आचरण करते हुए; सदा—सदैव ।

हर प्राणी का कर्तव्य है कि वह अपने प्राण, धन, बुद्धि तथा वाणी से दूसरों के लाभ हेतु

कल्याणकारी कर्म करे ।

तात्पर्य : उक्त उद्धरण श्रील प्रभुपाद कृत चैतन्य चरितामृत (आदि ९.४२) से लिया गया है ।

इति प्रवालस्तबकफलपुष्पदलोत्करैः ।
तरूणां नम्रशाखानां मध्यतो यमुनां गतः ॥ ३६ ॥

शब्दार्थ

इति—इस प्रकार कहते हुए; प्रवाल—नई शाखाओं का; स्तबक—गुच्छे से; फल—फल; पुष्प—फूल; दल—तथा पत्तियों
की; उत्करैः—अधिकता से; तरूणाम्—वृक्षों की; नम्र—झुकी हुई; शाखानाम्—डालियों के; मध्यतः—बीच में से;
यमुनाम्—यमुना नदी तक; गतः—आये ।

इस तरह वृक्षों के बीच विचरण करते हुए, जिनकी शाखाएँ कोपलों, फलों, फूलों तथा
पत्तियों की बहुलता से झुकी हुई थीं, भगवान् कृष्ण यमुना नदी के तट पर आ गये ।

तत्र गाः पाययित्वापः सुमृष्टाः शीतलाः शिवाः ।
ततो नृप स्वयं गोपाः कामं स्वादु पपुर्जलम् ॥ ३७ ॥

शब्दार्थ

तत्र—वहाँ; गाः—गौवों को; पाययित्वा—पानी पिलाकर; अपः—जल; सु-मृष्टाः—अत्यन्त स्वच्छ; शीतलाः—शीतल;
शिवाः—स्वास्थ्यप्रद; ततः—तत्पश्चात्; नृप—हे राजा परीक्षित; स्वयम्—अपने से; गोपाः—गवालबाल; कामम्—
स्वच्छन्दतापूर्वक; स्वादु—स्वादु; पपुः—पिया; जलम्—जल ।

गवालों ने गौवों को यमुना नदी का स्वच्छ, शीतल तथा स्वास्थ्यप्रद जल पीने दिया । हे राजा
परीक्षित, गवालों ने भी जी भरकर उस मधुर जल का पान किया ।

तस्या उपवने कामं चारयन्तः पशून्वृष ।
कृष्णारामावुपागम्य क्षुधार्ता इदमब्रवन् ॥ ३८ ॥

शब्दार्थ

तस्याः—यमुना के किनारे; उपवने—छोटे जंगल में; कामम्—इच्छानुसार इधर उधर; चारयन्तः—चराते हुए; पशून्—पशुओं को; नृप—हे राजा; कृष्ण-रामौ—कृष्ण तथा राम; उपागम्य—निकट जाकर; क्षुत्-आर्ताः—भूख से पीड़ित; इदम्—यह; अब्रुवन्—कहा।

तत्पश्चात् हे राजन्, सारे ग्वालबाल यमुना के तट पर एक छोटे से जंगल में पशुओं को उन्मुक्त ढंग से चराने लगे। किन्तु शीघ्र ही भूख से त्रस्त होकर वे कृष्ण तथा बलराम के निकट जाकर इस प्रकार बोले।

तात्पर्य : श्रील जीव गोस्वामी कहते हैं कि ग्वालबाल चिन्तित थे कि कृष्ण भूखे होंगे अतः उन्होंने अपने भूखे होने का स्वांग रचा जिससे कृष्ण तथा बलराम खाने के लिए समुचित प्रबन्ध करें।

इस प्रकार श्रीमद्भागवत के दसवें स्कंध के अन्तर्गत “कृष्ण द्वारा अविवाहिता गोपियों का चीरहरण” नामक बाइसवें अध्याय के श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद के विनीत सेवकों द्वारा रचित तात्पर्य पूर्ण हुए।